123 अफजल गुरू और फांसी की सजा

भारतीय संसद पर आक्रमण की योजना के प्रमुख सूत्राधार होने के अपराध में सर्वोच्च न्यायालय ने भी अफजल गुरू की फासी की सजा की पुष्टि कर दी। अफजल गुरू ने राष्ट्रपति जी से क्षमा की अपील की। फांसी की सजा की न्यायालय से पुष्टि और राष्ट्रपति जी से क्षमा याचना के साथ ही याचना के पक्ष विपक्ष में तर्क और दबावों का भी क्रम प्रारंभ हो गया। वामपंथी, मुस्लिम बहुमत तथा हिन्दु अल्पमत, सजा माफी के पक्ष में प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से आगे आया तो दक्षिणपंथी, मुस्लिम अल्पमत तथा हिन्दुओं का बहुमत ऐसी किसी भी माफी के विरूद्ध था। राष्ट्रपति जी ने प्रार्थनापत्र गृह मंत्रालय को भेज दिया जहॉ वह अब भी विचाराधीन है।

सजा माफी के पक्ष में मुख्य रूप से छः बातें प्रकाश मैं आई हैं–

(1) अफजल गुरू ने क्षमा याचना की है। क्षमा याचना के मुद्दे पर विचार करते समय दो बात विचारणीय होती हें, (क) अपराधी ने भावनाओं में बहकर अपराध कर दिया जिसका उसे बाद में पश्चाताप हुआ, (ख) अपराधी अब तक अपने कार्य को ठीक मानता था किन्तु अब उसे विश्वास हो गया कि उसका कार्य गलत था। अफजल गुरू के मामलें में दोनों बातें नहीं हैं। अफजल ने जो काम किया वह पूरी तरह सोच समझ कर किसी योजना के अन्तर्गत किया, क्षणिक आवेश में नहीं। अपराध करने से लेकर सजा घेषित होने तक कहीं भी उसे अपने किये का पश्क्ताप नहीं रहा। राष्ट्रपति जी को प्रेषित पत्र के बाद भी उसके व्यवहार से कहीं भी ऐसा स्पष्ट नहीं है कि उसे अपने किये का पछतावा हो। बीस पृष्ठों को अवेदन ही इस बात का प्रमाण है कि उसमें याचना कम और तर्क अधिक होंगे। भारत में एक भी व्यक्ति ऐसा नहीं जिसे विश्वास हो कि अफजल को अपने किये पर पछतावा हैं।

(2) किसी भी व्यक्ति को फांसी देना अमानवीय है। इसलिये अफजल की भी फांसी अमानवीय है। भारत के वामपंथी, मानवाधिकारवादी तथा तथाकथित धर्म निरपेक्ष लोग यही तर्क दे रहे हैं। धनंजय की फांसी के समय भी इन्होने यही प्रश्न उठाया थ। कोई भी सजा मानवीय न होती है न हो सकती है। सजा का आधर यह होता है कि वह (क) पीड़ित की संतुष्टि, (ख) अपराधी के मन में सुधार और (ग) समाज पर प्रभाव तथा न्यूनतम अमानवीय के बीच संतुलन पैदा करने वाला होना चाहिये। अफजल के मामलें में पीड़ित की संतुष्टि का प्रश्न ही नहीं है और न ही अपराधी के सुधार का है। विचारणीय प्रश्न यह है समाज पर फांसी का प्रभाव कितना पड़ सकता है। भारत में जघन्य अपराधों का ग्राफ बढ़ता जा रहा है। ऐसे अवसर पर विचारणीय प्रश्न यह नहीं है कि दण्ड अमानवीय हो या मानवीय है। विचारणयीय प्रश्न यह है कि दण्ड कितना प्रभावोत्पादक है। जो लोग दण्ड के मानवीय और प्रभावोत्पादक होने के दोनों पक्षों को साथ मे विचारार्थ प्रस्तुत कर रहे हैं ऐसे लोगों के विचार तो इस विचार मंथन में शामिल किये जाने याग्य हैं किन्तु जो लोग दण्ड के प्रभाव की चिन्ता छोड़कर सिर्फ दण्ड के मानवीय अमानवीय होने का तर्क देते हें वे या तो बकवास मात्र मानकार विचार मंथन से दूर हटाने योग्य हैं या वे किसी दूरगामी योजना के अन्तर्गत दण्ड की मानवता का प्रश्न उठाकर अपना उल्लू सीधा करना चाहते है। दण्ड के समाज पर पड़ने वाले प्रभाव के आकलन के आधार पर मेरा यह मत बना है कि भारत की वर्तमान आपराधिक पृष्ठभूमि को देखते हुए दण्ड व्यवस्था को कुछ और अधिक कठोर तथा अमानवीय करने की आवश्यकता है जिसके अन्तगत यदा कदा प्रतीक स्वरूप सार्वजनिक फांसी की प्रथा शुरू कर दी जाय। जो लोग भी फांसी की सजा के विरूद्ध आवाज उठाते हैं उनमें से एक भी आवाज ऐसी नहीं है जिसने दण्ड के प्रभावशाली होने की कोई चिन्ता की हो। यदि ये

लोग फांसी की सजा का कोई प्रभावकारी विकल्प प्रस्तुत किये बिना फांसी हटाने की बात कर रहे ह उन्हं इस चर्चा से दूर करना ही उचित है।

(3) पाकिस्तान से सम्बन्धों पर बुरा असर पड़ेगा। प्रश्न उठता है कि क्या अफजल गुरू को पाकिस्तान अपना मानता है? पूरी दुनिया जानती है कि संसद पर होने वाले हमले से प्रत्यक्ष या अप्रक्ष सहानुभूति पाकिस्तान की रही किन्तु क्या पाकिस्तान उसे प्रत्यक्ष करना चाहेगा? जो भी लोग अफजल की फांसी को पाकिस्तान से जोड़कर प्रस्तुत कर रहे हैं वे भारी भूल कर रहे हैं। अफजल की फांसी से पाकिस्तान को आन्तरिक रूप से चाहे जितना कष्ट हो किन्तु उसका लेश मात्र प्रभाव भी प्रत्यक्ष नहीं हो सकता। काश्मीर के पूर्व मुख्यमंत्री फारूक अब्दुल्ला जी ने तो पाकिस्तान में होने वाली प्रतिक्रिया के संबंध में यहॉ तक कह दिया कि अफजल की फांसी के परिणाम स्वरूप पाकिस्तान के राष्ट्रपति परवेज मुशरफ का तख्ता भी पलटा जा सकता है जिसका दुष्प्रभाव भारत की शान्ति वार्ता पर पड़ेगा। आश्चय होता है कि ऐसे ऐसे गंभीर राजनेता भी अपनी भावनाएँ व्यक्त करते समय ऐसे ऐसे अतिवादी तर्कों का सहारा ले लेते हैं जो तर्क सामान्य व्यक्ति भी कुतर्क मानता है।

(4) सम्पूर्ण भारत और विशेष रूप से कश्मीर में भयानक अशान्ति हो सकती है। फारूक जी ने इस संबंध में तर्क प्रस्तुत किया कि अफजल की फांसी से पूर भारत में अशान्ति हो जायेगी। आतंकवादी जजों की भी हत्या कर सकते है। आवंकवादी कार्यवाही के कारण पूरे भारत के हिन्दू मुस्लिम रिश्ते भी नष्ट हो सकते हैं। कश्मीर में भी आग लग जायेगी। ''फारूक अब्दुल्ला ने जो कुछ कहा वह अत्यन्त आपत्तिजनक होते हुए भी इस लेख में विचारणीय नहीं है, क्योंकि उन्हें जब भूल का अनुभव हुआ तो उन्होंने और कश्मीर के मुख्यमंत्री गुलामनवी आजाद जी ने अपने उकत कथन के भवार्थ को कुछ पलटने का प्रयास किया। दूसरी बात यह भी है कि जो आदमो अफजल की फांसी के कारण पाकिस्तानी राष्ट्रपति के तख्ता पलट तक के तर्क दे सकता है वह यदि भारत के किसी जज की हत्या, भारत में अशान्ति, कश्मीर में आग लगने जैसी बात करे तो हमें ऐसी अनर्गल बातों को ओर ऐसी अनर्गल बातें करने वाले को गंभीर विचार विमर्श में शमिल नही करना चाहिये। किन्तु भारत में कई लोगों ने इतनी आशंका तो अवश्य व्यक्त की है कि इससे सम्पूर्ण भारत में अशान्ति का वातावरण बनेगा। इससे आतकवाद बहत अधिक सक्रिय हो सकता है। इससे मुसलमानों के मन में दुख हो सकता है आदि आदि। ऐसी आशंकाओं में कुछ यथार्थ भी हो सकता है। प्रश्न उठता है कि क्या अब तक की भारत में शान्ति व्यवस्था कट्टरपंथियों की दया पर निर्भर है? क्या वे जब चाहें तब इस शान्ति को प्रभावशाली ढंग से ध्वस्त कर सकते हैं? यदि सच में ऐसा है तो यह तो गंभीर चिन्ता का विषय है। मुझे तो ऐसा कभी नहीं लगता कि आतंकवादी फिदायनी दस्ते बनकर मरने तक के कार्य शुरू कर चुके हैं तो ऐसी कल्पना बेमानी होगी कि आतंकवादी आतंक फैलाने में कोई कसर छोड़ रहे हैं।

(5) इससे मुसलमानों में गलत संदेश जायेगा। यह बात भी कई तरफ से उठी है। मुख्य प्रश्न यह है कि भारत का मुसलमान अफजल को आतंकवादी मानता है कि मुसलमान। यद्यपि अफजल को माफ करने के पक्ष में ज्यादा मुसलमानों ने आवाज उठाई किन्तु कुछ मुसलमानों ने अफजल को आतंकवादी मानकर फांसी का समर्थन भी किया है। यह एक शुभ लक्षण है। यदि साम्प्रदायिक मुसलमानों के वोटों की चिन्ता करके फांसी में हेर फेर हुआ तो धर्म निरपेक्ष मुसलमानों की आवाज और कमजोर हो जायगी जिसका परिणाम ज्यादा खराब होगा।

(6) अफजल को ठीक से न्याय नहीं मिला। यह तर्क देने वालों का मुख्य आधार यह है कि अफजल उक्त आक्रमण से सीधा संबद्ध न होकर योजनाकार मात्र था। उनकी नजर में योजनाकार का अपराध अपराधी से छोटा ही हो सकता है, बड़ा नहीं। मेरा अपना विचार यह है कि योजनाकार का अपराध संलिप्त से अधिक गंभीर होता है कम नहीं। अपराधी प्रेरित थे और अफजल प्रेरक। सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय के बाद अफजल को निर्दोष कहने वालों में न्याय भाव कम दिखता है और अपनत्व ज्यादा। अफजल को निर्दोष सिद्ध करते समय तो इन्हीं की नजर में न्यायालय न्याय का मंदिर था। अब एकाएक वहॉ कैसे अन्याय हो गया?

कुछ लोगों ने अफजल की फांसी के समर्थन में प्रदशन किये। उनके मुख्य दो तर्क थे।

(1) कानून व्यवस्था मजबूत होगी। इनके इस तर्क में दम है। अफजल को फांसी होने से भारत में न्याय और कानून पर विश्वास बढ़ेगा। यह तर्क सामान्य जनों के लिये तो ठीक है किन्तु यह तक जब वे लोग प्रस्तुत करते हैं जिन्होने गोडसे की फांसी का विरोध किया था तब थोड़ा सा कुतर्क लगता है। गोडसे के अपराध की तुलना में अफजल का अपराध न अधिक वीभत्स है न गंभीर। अफजल के कृत्य के परिणामों की अपेक्षा गोडसे के कृत्य का अधिक गंभीर दुष्परिणाम हुआ। गांधी का विकल्प आज तक नहीं बन सका। गांधी की हत्या के समर्थक जब अफजल फांसी में औरों से ज्यादा आगे आगे उछलते हैं तो कहीं न कहीं ''बिल्ली के भाग्य से छींका टूटा और बिल्ली उसका लाभ उठाने के लिये टूट पड़ी '' जैसी कहावत की गंध आती है। भाजपा इस प्रकरण का लाभ उठाना चाहती है जो स्वभाविक भी है किन्तु भाजपा को ऐसे गंभीर गंभीर मुद्दों पर जन उभार का आवसर देना चाहिये, राजनैतिक लाभ हानि का नहीं। अफजल की फांसी का मुद्दा कोई साधारण मुद्दा नहीं जिसे राजनैतिक लाभ हानि की भेंट चढ़ाया जायें।

(2) राष्ट्रपति के क्षमादान की न्यायिक समीक्षा संभव है। मेरे विचार में यह एक खतरनाक परपरा होगी। आज न्यायपलिका विधायिका की अपेक्षा अधिक संवेदनशील है, किन्तु भविष्य में भी न्यायपालिका का पतन कभी नहीं होगा यह बात गारंटी से नहीं कही जा सकती। हम पतित विधायिका और कार्यपालिका मिलकर वोटों के लालच में अफजल की फांसी को आजन्म कारावास में बदल भी दे तो कोई आसमान नहीं टूटने वाला है कि हम उक्त मामले को पुनः न्यायिक समीक्षा की वकालत करने लग जावें।

अफजल की फांसी के पक्ष विपक्ष में सारे तर्कों पर विचार करने के बाद मेरा यह मत है कि विधायिका, न्यायपालिका तथा कार्यपालिका को मिलकर इस मामलें में अपराधो की सार्वजनिक फांसी का आदेश प्रसारित करना चाहिये। यही आज की समय की मांग है और न्याय का तकाजा। इसके लिये किस पक्ष को क्या करना होगा यह बताना मेरा काम नहीं। मेरा काम तो सिर्फ परिस्थिति जन्य आवश्यकता की ओर इशारा करना मात्र है कि ऐसे खतरनाक अपराधी को सार्वजनिक फांसी देकर हम दुनिया के आतंकवाद को एक मजबूत आतंकवाद विरोधी संदेश देने में सफल हो सकेंगे।

साम्राज्यवाद, आतंकवाद और भारत

दुनिया में तीन विचार धाराओं के देश साम्राज्यवादी माने जाते हैं (1) पूँजीवादी, (2) समाजवादी, (3) इस्लामिक। तीनों धाराओं की विचार धारा, कार्यक्रम और साम्राज्यवाद के तरीके भिन्न–भिन्न होते हैं। पूँजीवादी देशों में यघपि इंग्लैण्ड, फ्रांस, जर्मनी आदि अनेक देश सम्मिलित हैं किन्तु इनका पूरा–पूरा नेतृत्व अमेरिका के पास रहता है। वही अपने राष्ट्रीय हितों के आधार पर अपनी परिभषाऍ बनाता है, नीतियॉ तय करता है तथा उनका कार्यान्वयन करता है। पिछले इतिहास को छोड़कर हम स्वतंत्रता के बाद की भी साम्राज्यवादी घटनाओं की चर्चा करें तो अमेरिका ने सदा ही पूँजी के बल पर साम्राज्य विस्तार के प्रयत्न किये। सारी

दुनियॉ में झगड़े कराकर उन्हें हथियार सप्लाई करना और उससे प्राप्त अथाह धन राशि उन देशों में अपने समर्थक तैयार करने पर लगाकर पूॅजीवाद का विस्तार करना इनका तरीका रहा है। किसी भी देश पर प्रत्यक्ष आक्रमण न करके वहॉ अपनी समर्थक सरकार स्थापित कराने का ही इनका तरीका रहा है। अमेरिका प्रत्यक्ष साम्राज्यवाद के कलंक से बचकर परोक्ष साम्राज्यवाद का पक्षधर रहा। इसने लोकतंत्र को अपनी विचार धारा घाषित किया और अपने मित्र देशों में आन्तरिक लोकतंत्र को प्रोत्साहित भी किया किन्तु तटस्थ देशों को अमेरिका ने कभी स्थिर नहीं होने दिया। निरंतर ही पूॅजी के बल पर ऐसे देशों की आन्तरिक व्यवस्था का अपने अनुकूल बनाने का इसने भरसक प्रयत्न किया। यहॉ तक कि अपने धन के बल पर तटस्थ अथवा शत्रु राष्ट्रों में अपनी जासूसी का मजबूत नेटवर्क खड़ा करके वहॉ के राजनैतिक नेताओं की हत्या के प्रयत्न भी अमेरिका ने अपने साम्राज्यवाद के लिये किये ।

साम्यवादी देश दूसरे साम्राज्यवादी देश हैं जिनमें रूस और चीन मुख्यरूप से शामिल हैं। साम्यवादियों ने अमेरिका के समान छल कपट या अप्रत्यक्ष साम्राज्यवाद का सहारा नहीं लिया। इन्होंने हमेशा ही प्रत्यक्ष आक्रमण करके जीतना और उस पर कब्जा करना ठीक मार्ग माना। चेकोस्लोवाकिया, अफगानिस्तान और तिब्बत इसके बिल्कुल ताजा उदाहरण हैं इनका जासूसी तंत्र अमेरिका की अपेक्षा कमजोर होता है। शस्त्र बेचकर ये धन भी इकट्ठा नहीं कर पाते। किन्तु अपने देश वासियों का पेट काटकर भी ये दूसरे देशों में अपने समर्थक एजेन्ट खड़ा करने में काफी धन खर्च करने के लिय ये अमेरिका से भी आगे निकलने का प्रयास करत रहे। इन्होने अमरिका को साम्राज्यवाद का एकमात्र केन्द्र बनने से सफलता पूर्वक रोककर रखा।

साम्राज्यवाद का तीसरा केन्द्र है इस्लाम। जहॉ अमेरिका ने साम्राज्य विस्तार का मुख्य आधार धन बनाया और चीन रूस ने शक्ति संग्रह वही इस्लाम ने साम्राज्यवाद के विस्तार के लिये धर्म को मुख्य आधार बनाया। एक देश इनका केन्द्र नहीं बन सका कयोंकि साम्राज्य विस्तार की नीति का आधार शसन न बनकर संगठन बना। पूरी दुनिया के अधिकांश मुसलमान दारूल हरब को दारूल इस्लाम बनान में इस सीमा तक सक्रिय हुए कि इनका प्रत्येक सदस्य स्व स्फुर्त साम्राजयवाद के विस्तार में लग गया। अन्य दो साम्राज्यवादियों को अपने समर्थकों के लिये धन खर्च करना पड़ता था किन्तु इस्लाम समर्थकों के लिय धन कभी बाधा नहीं रहा। इनका प्रत्येक सदस्य अच्छी तरह मानता था कि संख्या विस्तार के क्रम में न्याय अन्याय की चर्चा को कभी बाधक नहीं बनने देना चाहियें।

अमेरिकन साम्राज्यवाद को पहली चुनौती दी साम्यवादी साम्राज्यवाद ने। इसने विश्व व्यवस्था को कभी एक ध्रुवीय नही बनने दिया। अमेरिका और रूस निरंतर एक दूसरे के विस्तार पर अंकुश रखत थे। मुसलमान धन और सुविधऍं ले लेकर अमेरिका का साथ देते थे। बदले में अमेरिका मुस्लिम देशों की आर्थिक मदद भी करता था और संख्या विस्तार प्रयत्नों में भी चुप रहता थ। धीरे–धीरे साम्यवाद का प्रमुख ''रूस'' टकराव से थका और उसने अमरिकी साम्राज्यवाद स टकराव का मार्ग छोड़कर संधि कर ली। चीन ने यद्यपि हार तो नहीं मानी किन्तु वह प्रत्यक्ष टकराव छोड़कर वैचारिक टकराव तक सीमित हो गया। अमेरिका अकेला विश्व प्रमुख बन बैठा। ऐसे समय में अमेरिका घमंड में आ गया और उसने इराक पर बेमतलब आक्रमण कर दिया मौके की ताक मं बैठे साम्यवाद और अमेरिकी आक्रमण से पीड़ित इस्लाम ने हाथ मिला लिया और साम्यवाद के सारे समीकरण बदल गयें। पहले इस्लाम पूॅजीवाद और साम्यवाद के बीच दानों ओर से लाभ उठा रहा था वही लाभ उठाने की बारी अब चीन की थी। चीन एक तरफ तो इराक को "चढ़ जा बटा शूली पर'' की तर्ज पर आगे बढ़ाता रहा और दूसरी तरफ अमेरिका से भी बातें करता रहा। परिणाम स्वरूप इस्लाम को पर्दा हटाकर अकेले ही टक्कर लेने के लिये सामने आना मजबूरी हो गई।

साम्राज्यवाद के त्रिगुटीय खेल में भारत की स्थिति सदा ही भिन्न रही। इसने अमेरिका, रूस और इस्लाम के बीच स्वयं को संतुलित रखा। जब तक साम्यवाद संघर्ष से ओझल नहीं हुआ तब तक भारत पूरी तरह अस्पष्ट रहा। साम्यवाद के टकराव से बाहर होने के बाद भारत ने संतुलनकर्ता की भूमिका छोड़कर अमेरिकी साम्राज्यवाद से मित्रता करनी शुरू कर दी। भारत की सम्पूर्ण अर्थ व्यवस्था एवं विदेश नीति पूरी तरह अमेरिका की तरफ झुकी हुई है। उधोगो का निजीकरण, तथा अमेरिका सन्धि इसके ताजा उदाहरण है।

प्रश्न उठता है कि भारत को इस स्थिति में क्या करना चाहियें। भारत आन्तरिक आतंकवाद की चपेट में है। इस्लामिक आतंकवाद और नक्सलवादी आतंकवाद लगातार पैर पसार रहे हैं। सत्तारूढ़ कांग्रेस पार्टी की हालात तो बहुत विचित्र हो गई है। बहुत सोच समझ कर महसूस किया कि भारत के लिये साम्यवादियों के दबाव में आकर अमेरिका विरोध का मार्ग पकड़ना भारत की भूल होगी क्योंकि इस्लाम और चीन भारत को आगे करके साम्राज्यवाद विस्तार को त्रिकोणीय से हटाकर चतुष्कोणीय बनाना चाहते है, जैसा भारत का न कभी स्वभाव रहा है न इच्छा। भारत न कभी साम्राज्यवादी रहा है न ही युद्ध पिपासु। भारत हमेशा गांधी के मार्ग को आगे रख कर चलता रहा है। फिर भारत को क्यो किसी देश विशेष का समर्थन या विरोध करना उचित है? विशेष कर तब जब तीनों ही महाशक्तियॉ साम्राज्यवादी खेल खेल रही हों। भारत के साम्यवादी तो चीन समर्थन के लिये विख्यात ही हैं। ये तो किसी भी रूप में अमेरिका विरोध के नाम पर चीनी साम्राज्यवाद का समर्थन करते हैं जिसकी नवीनतम धुरी में इस्लाम का समर्थन भी शामिल हो गया है। चीन ने पूरा तिब्बत निगल लिया। चीन द्वारा भारत का बड़ा भू–भाग दबा कर रखने के बाद भी अभी अरूणांचल को भूख उसे रह रहकर सताती रहती है किन्तु साम्यवादियों को इसमें कोई साम्राज्यवाद जड़ नही आता। अब तो कुछ गांधीवादी भी अमेरिका विरोध के फैशन मे सामयवादियों से भी आगे निकलने का प्रयत्न कर रहे हैं। भारतीय साम्यवादियों का न कभी साम्राज्यवाद से लेना देना रहा है न ही आतंकवाद से। वे तो सिर्फ बांसुरी मात्र हैं जिसमें साम्यवादी सम्राज्यवाद के हित चिन्तन के अलावा कोई अन्य धुन निकलती ही नहीं।

संघ की हालत ता और भी खराब है। संघ भारत को हिन्दु राष्ट्र की मांग के साथ–साथ बल प्रयोग का भी समर्थन करता है। संघ नहीं समझता कि ये दोनों मांगे भारत को तीन साम्राज्यवादी शक्तियों के मुकाबले चौथी सामाज्यवादी शक्ति बनने की प्रतिस्पर्धा में ढकेल देगी। भारत का न ऐसा सिद्धांत है न ही आवश्यकता किन्तु संघ लगातार इसी कसरत में लगा रहता है संघ यह क्यों नहीं समझता कि आज भारत में नक्सलवाद और इस्लामिक आतंकवाद के विरूद्ध जनमत जागरण पर सारा ध्यान केन्द्रित करना चाहियं किन्तु संघ इन दो को छोड़कर कहीं से स्वदेशी जागरण में शक्ति लगा रहा है जो आज की प्राथमिक आवश्यकता नहीं।

विदेश नीति के मामले में जहॉ कांग्रेस की नीति तीनों साम्राज्यवादी शक्तियों से सम्पर्क बनाकर चलने की है वहीं भाजपा की विदेश नीति तीनों महाशक्तियों को गाली देने की है। इस्लाम और साम्यवाद का तो वे विरोध करते ही है, अमेरिका का भी उसी तरह विरोध करते हैं। भाजपा की न अपनी कोई अर्थनीति दिखती है न विदेश नीति। कांग्रेस जो भी करती है उसका विरोध तक संघ के समान ही भारत को चौथी साम्राज्यवादी शक्ति बनाना चाहती है या किसी साम्राजयवादी शक्ति के विरोध या समर्थन का महत्व ही उसे पता नहीं।

मेरे विचार में भारत की वर्तमान नीति तीन बातों पर चलती दिख रही है, (1) अर्थनीति के मामलें में अमेरिका से प्रतिस्पर्धा। स्पष्ट है कि भारत बौद्धिक मामले में इस्लामिक देश तथा साम्यवादी देशों की अपेक्षा अधिक मजबूत है। अब तक भारत के बुद्धिजीवियों को अमेरिका से प्रतिस्पर्धा। स्पष्ट है कि भारत बौद्धिक मामले में इस्लामिक देश तथा साम्यवादी देशों की अपेक्षा अधिक मजबूत है। अब तक भारत के बुद्धिजीवियों को अमेरिका से प्रतिस्पधा का अवसर ही नही मिला।

(2) विदेश नीति के मामले में गुण दाष के आधार पर समर्थन या विरोध। हमें किसी भी हालत में किसी भी देश का न समर्थक दिखना चाहिये न विरोधी। अमेरिका समर्थक या विरोधी पक्षों से समान दूरी बनाकर रखनी आवश्यक है। (3) आतंकवाद क मामले में इस्लामिक आतंकवाद और वामपंथी आतंकवाद का पूरा विरोध। आतंकवाद भारत का सबसे खतरनाक शत्रु है। आतंकवाद पर नियंत्रण के लिये आतंकवाद विरोधी विश्व प्रयत्नों के साथ भी खड़ा होना हो तो होना चाहिये किन्तु सतर्क रहना होगा कि आतंकवाद विरोध के नाम पर अमेरिका अपने साम्राज्यवाद विस्तार में भारत का उपयोग न कर सकें।

भारत सरकार क वर्तमान प्रयत्न संतोष जनक दिशा म है। आतंकवाद के विरूद्ध भारत को और अधिक सक्रिय होना चाहिये। भारत को याद रखना चाहिये कि भारत के मार्गदर्शक महात्मा गांधी हैं जो आतंकवाद के भी मूलतः विरोधी हैं और साम्राज्यवाद के भी। यदि हमने पूँजीवाद, साम्यवाद और धार्मिक कट्टरवाद को साम्राज्यवाद का ही अलग–अलग संस्करण न समझकर भूल की तो यह देश गांधी मार्ग से भटक जायगा जिसका दोष न वामपंथियां का होगा न गांधीवादियों का और न ही संघ भाजपा का। इसका सीधा सीधा दोष सत्तारूढ़ कांग्रेस का ही माना जायेगा जिसके जिम्मे शासन सौंपकर आज भारत की जनता पूरी तरह निश्चित हैं।

सूचना

हमारे दिल्ली कार्यालय में निरंतर ही अपने ज्ञान तत्व के पाठक या अन्य विद्वान आते रहते हैं और ज्ञान तत्व में प्रकाशित लेख या प्रश्नोत्तर या अन्य अनेक विषयों पर चर्चाएं होती रहती हैं। ये लोग कई प्रकार के ऐसे भी प्रश्न किया करते हैं जिनका उत्तर आम पाठाका के लिये उपयोगी हागा। ज्ञान तत्व कार्यालय उपयोगी प्रश्न हैं किन्तु पत्र लेखक उन पत्रों के प्रकाशन से भी सहमत नहीं आर अपना नाम भी नहीं देना चाहते। पिछले दिनों ऐसे एक दो पत्रों पर गंभीर आपत्ति भी की गई।

अब हमन तय किया है कि ऐसे सभी प्रश्नों को एक नये कालम ''कार्यालयीन चर्चाओं में प्रश्नात्तर '' के रूप में प्रारंभ कर रहे हैं। यदि आप कोई प्रश्न करना चाहें जिसमें आप अपनी नाम पता न देना चाहें तो आप अब निःसंकोच पत्र लिख सकते हैं। ऐसे प्रश्न कार्यालयीन चर्चाओं में प्रश्नोत्तर के अन्तर्गत शामिल करके उत्तर दिया जायगा।

कार्यालयीन प्रश्नों के उत्तर

प्रश्नः– जनसत्ता आठ नवंबर के एक कालम मं अपूर्वानन्द जी ने लिखा है कि राज्य के हाथां मारे जाने वालें लोगों में भी मुसलमान अधिक हैं और जेल में भी मुसलमानों की संख्या अधिक हैं। आपका इस संबंध में क्या विचार है?

अपूर्वानन्द जी ने उसी लेख में आगे लिखा है कि महाराष्ट्र में एक सवर्ण युवक का दलित लड़की से प्रेम संबंध होने के विरोध स्वरूप सवर्णो ने लड़की और उसक परिवार के अन्य तीन सदस्यों की अमानवीय और घृणित तरीके से हत्या कर दी। ऐसी वीभत्स हत्या के विरूद्ध सवर्णो की चुपी भी आश्चर्य जनक है। इस संबंध में भी अपने विचार व्यक्त करें।

उत्तरः– मैं बचपन से ही संघ के लोगों के मुॅह से बार बार यह सुनते आया हूॅ कि समाज में विभिन्न प्रकार के अपराध कर्मियों में मुसलमानों की संख्या अधिक होती हैं ये सब लोग, उदाहरण देते हैं। जब भी कोई मुसलमान किसी अपराध में पकड़ा जाता है तब भी ये संघ वाले तत्काल यह बात दुहराना नहीं भूलते। मैं स्वयं आपातकाल में कई जेलों में रहा। मैनें ऐसा कुछ नहीं पाया। धार्मिक कट्टरता से जुड़े अपराधा के मामलों में मुसलमानों की संख्या उनके अनुपात से कई गुना अधिक होती है, बलात्कार या महिला छेड़छाड़ के मामलों में उनके प्रतिशत में मामूली सा अन्तर होता है तथा अन्य सब प्रकार के अपराधों में उनका अनुपात लगभग अन्य लोगों के समकक्ष ही हाता है। अपूर्वानन्द जी ने कोई नई बात नही कही। यह बात तो संघ के लोग बराबर ही कह रहे हैं। अपूर्वानन्द जी ने मात्र वह बात दुहराई है। मैं अपूर्वानन्द जी को नहीं जानता किन्तु उनके इस कथन से कि जेलों में बन्द अपराधियों में मुसलमानों की संख्या अधिक होती है? संघ समर्थक होने का आभास होता हैं।

मैंने दिल्ली से प्रकाशित एक पाक्षिक प्रथम प्रवक्ता के दो तीन अंक पढ़े। यह पत्रिका मुझे बहुत पसंद आई। इसके संपादक राम बहादुर जी राय हैं। इस पत्रिका के सोलह नवंबर के अंक के पृष्ठ इकतीस पर ''जॉच पर सवाल'' शीर्षक से मैने एक समाचार पढ़ा जिसमें मालेगांव बम विस्फोट कांड में चल रही पुलिस जॉच पर सवाल खड़े करने वालों का विवरण है। मशहूर शायर जावेद अख्तर, तीस्ता शीतलवाड़, एडवोकेट युसुफ मछाला, इस्लामिक विद्वान मौलाना हसन नदवी आदि ने जॉच की निष्पक्षता पर प्रश्न उठाये हैं। मैं कई बार इनके नाम ऐस मामलों में सुन चुका हूॅ। ऐसे और भी कई लोग हैं जो आतंकवाद के नाम पर किसी मुसलमान के गिरफ्तार होने पर उसके निदाष होने का खूब प्रचार करते हैं। जब वह मुसलमान दोषी प्रमाणित होता है तब तो ये लोग चुप हो जाते हैं और जब वह निर्दोष सिद्ध होता है तब ये खूब हल्ला करत है कि उन्होने तो पहले ही कहा था कि पुलिस निर्दोष मुसलमानों को फंसा रही है। गुजरात की पुलिस ने जब इशरत जहॉ को गोली मारी थी तब भी ऐसे पशेवरों ने मुस्लिम अत्याचार का तीन दिन तक खूब रोना रोया था। तीन दिन में ही जब प्रमाणित हुआ कि उक्त महिला आतंकवादी थी तब इनके मुॅह पर ताले बन्द हुए। जो लोग यह प्रश्न उत्तर देना चाहिये कि ऐसी आतंकवादी घटनाओं के दोषी अपराधियों में अधिकांश लोग मुसलमान ही क्यो होते हैं। यदि किसी अपराध में यह पता हो जावें कि उक्त धटना का अपराधी दुबला पतला कालें लोगों में से कुछ संदेहास्पद लोग संदेहास्पद लोगेां संदेह के आधार पर पकड़े भी जायंगे और ऐस संदेहास्पद लोगों में से अधिकांश निर्दोष होंगे यह भी स्वाभविक है। ऐसे समय यदि कोई कह कि ऐसा अत्याचार है ता मैं कह सकता हूॅ कि ऐसे संदेह को अत्याचार कहने वाले को पेशेवर कहने में कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिये। मुझे तो ये लोगों पर संदेह होता है जो ऐसे मामलों में अनावश्यक हस्तक्षेप करते हैं।

समाज में दो ध्रुव स्पष्ट दिखते हैं। एक तरफ कुछ ऐसे लोग हैं जो साम्प्रदायिक आतंकवाद में मुसलमानों की संलिप्तता के आधर पर ही सभी अपराधा में उनकी संख्या अधिक होने का तर्क देते हैं। दूसरी तरफ कुछ ऐसे लोग हैं जो आतंकवाद में मुस्लिम संलिप्तता पर भी पश्न उठात रहते हैं। मैं मानता हूॅ कि दोनों धड़े अतिवादी हैं। दोनों को सच्चाइ स्वीकार करनी चाहिये। महाराष्ट्र में सवर्णो ने चार दलितों की अमानवीय तरीके से हत्या कर दी। अपूर्वानन्द जी के अनुसार यह घटना आपराधिक चरित्र की न होकर सवर्ण अत्याचार है। मैं इस बात से सहमत हूॅ कि यह घटना जातिवादी, श्रेष्ठता और दलित विभाजन की मानसिकता का परिणाम है न कि आपराधिक चरित्र। किन्तु अपूर्वानन्द जी ने इस घटना को प्रस्तुत करके जो निष्कर्ष निकाला है वह इस टकराव को बढ़ाने वाला है, घटाने वाला नही। मैं ऐसी कई घटनाऍ जानता हूॅ जिसमें किसी सवर्ण लड़के का दलित लड़की से प्रेम

संबंध होने पर दलितों ने उसे दलित महिला अत्याचार बताकर आंदोलन खड़ा कर दिया। प्रश्न उठता है कि दलित महिला से अवैध संबंधां को दलित जातीय शोषण का नाम दे दें तो ठीक कैस हो सकता है। यदि सवर्णों का विरोध गलत है तो दलितों का जातिगत विरोध भी गलत है। यह अलग बात है कि दलित उक्त सवर्ण युवक के विरूद्ध जातिगत कानूनों का सहारा लेकर अपना विरोध ठंडा कर लेते है और सवर्ण ऐसे कानूनी प्रावधानों के अभाव में अपना विरोध ठंडा करने के लिये अमानवीय उत्पीड़न तक उतर जाता है।

मैं तो इस मत का हूं कि उग्रवादी जातीय टकराव का लाभ उठाने के लिये कुछ लोग प्रतीक्षारत रहते हैं ऐसे लोग सवर्णो में भी होते हैं और दलितों में भी। यदि सवर्णो और दलितों का समझदार वर्ग मिलकर ऐसे मामलो में शान्तिपूर्ण विचार विमर्श की आदत डाल ले तो दोनो ही पक्षों के पेशेवर लोग असफल हो सकते हैं किन्तु इस बात का अभाव उन्हें कुछ भी करने और लिखने की छूट दे देता है। नागपुर की सामान्य आपराधिक घटना के साथ यदि डाक्टर या अन्य लोगों ने छेड़छाड़ करके विकृत न किया होता तो शायद यह घटना ऐसा स्वरूप ग्रहण न कर पाती। और तब शायद अपूर्वानन्द जी सरीखे लोग इसको जातीय टकराव का रूप नहीं दे पाते। भारत मं दलित उत्पीड़न का भरपूर लाभ सवर्ण समाज विरोधियों ने उठाया है। बड़ी संख्या मं शामिल प्रिय सवर्णो ने पीड़ित दलितों का पक्ष लिया। दलितों के मसीहा भीमराव अम्बेडकर की योग्यता का विकास किसी सहृदय सवर्ण ने किया था, उग्रवादी दलित ने नहीं। अब धीरे धीरे जब दलित कुछ मजबूत हुआ तो समाज विरोधी दलित उसका लाभ उठाने का भरपूर प्रयास कर रहे हैं। शान्तिप्रिय लोगां का जातीय विभाजन पहले धुर्त सवर्णो के लिय अनुकूल था और अब धूर्त दलितों के लिये। आवश्यकता यह है कि शान्ति प्रिय लोग ऐसे जातीय टकरावों का इस तरह मिलजूल कर मुकाबला करें कि धूर्त लोग ऐसे मामलों को जातीय रूप देकर उसका लाभ न उठा सकें।

(2) प्रश्नः–पिछले दिनों समाचार आया कि दुनिया के भ्रष्टाचार संबंधी आकलन मे भारत का स्थान कुछ नीचे आकर अब सत्तर हो गया है जिसका अर्थ यह है कि भारत में भ्रष्टाचार कम हुआ है। आपके विचार में आकलन गलत है या वास्तव में भ्रष्टाचार कम हुआ है?

उत्तरः–भ्रष्टाचार की मात्रा के दो आधार होते हैं (1) उत्पत्ति की मात्रा, (2) नियंत्रण। भ्रष्टाचार की उत्पत्ति के अवसर राष्ट्रीयकरण से पैदा होता हैं। यदि कानून कम होंगे तो भ्रष्टाचार कम पैदा होगा और नियंत्रण करना भी आसान हो जायगा। किन्तु यदि कानून भी हो सकता है जसा भारत में पिछले कई दशकों से हुआ।

नई आर्थिक नीति के शुरू होने के बाद राष्ट्रीकरण लगातार कम करके निजीकरण को बढ़ावा दिया जा रहा है। इससे भ्रष्टाचार उत्पत्ति के अवसर कम होता जा रहे हैं। जितने ही विभाग घटेंगे, या कानून कम होंगे, उतना ही भ्रष्टाचार कम होगा। निजीकरण का चाहे अन्य मामलों में जैसा बुरा प्रभाव पड़ता हो किन्तु भ्रष्टाचार तो निश्चित रूप से घटना ही है।

जिन विभागों में अब भी सरकारी हस्तक्षेप है या राष्ट्रीकत हैं। उनमें लगातार भ्रष्टाचार बढ़ रहा है क्योंकि भ्रष्टाचार नियंत्रण की व्यवस्थ लगभग फेल हो चुकी है। इसलिये भ्रष्टाचार हमें बढ़ा हुआ दिखता है जबकि वास्तव में वह कम हुआ है। मेरे विचार में आंकड़े गलत नही हैं

पत्रोत्तर

(1) श्री कृष्ण कुमार खन्ना, स्पोर्ट्स कालोनी, मेरठ, यू.पी.

यह बात ठीक है कि सरकार के पास या उसके अधीन समाज संचालन के कम से कम विषय हों। उसके अनुसार ही नीतियां तय हो गई हैं।

सरकार के तेजी से बढ़ते हुए विकराल रूप का बदलने की जरूरत है। सरकार के अधिकार कम करने की जरूरत है। गॉव समाज, नगर समाज को और नागरिक अधिकारों को प्राप्त कर उसकी सही उपयोग कैसे करें, इस पर प्रकाश डालें। व्यक्ति को ही प्रकृति ने ही सर्वसत्ता सम्पन्न बनाया है। उसने पैदा होने वाली विकृति ही उसे सत्ताहीन बना देती है। इस गिरावट को मनुष्य स्वंय ही रोक सकता है। जो रोक सकते हैं वह स्वंय भी सुखी रहते है, समाज को भी सुखी रखते है। अन्यथा समाज; गांव समाज या सरकार के हस्तक्षेप की जरूरत पड़ती है।

उत्तरः–आप एक तरफ तो शासन के अधिकार कम करने की आवश्यकता बताते हैं, दूसरी ओर उसके लिए भारत का आम नागरिक क्या करे यह बात न स्वंय बताते हैं न मुझसे पूछते हैं। इसके विपरित आप मुझसे पूछते है कि आम नागरिक अधिकारों का सदुपयोग कैसे करे । सदुपयोग करने की प्रणाली ता वे लोग बतावेंगे जो आदर्श व्यक्ति आदर्श समाज रचना पर विचार मंथन कर रह है। मेरा यह विषय ही नहीं है। मैं गांधी, विनाबा, जयप्रकाश के सभी विचारों को बढ़ाने का काम नही कर रहा। मुझे गांधी विनोबा, जयप्रकाश के शासन मुक्ति शोषण मुक्ति के विचार अच्छे लगे। मैं उस दिशा में लगातार बढ़ रहा हूँ। व्यक्ति इन अधिकारों का सदुपयोग कैसे करें ये विचार करने का समय अभी नही आया है। जब शासन से अधिकार वापस मिलने की संभावना दिखेगी तब इस मुद्दे पर विचार कर लेगें।

आपने सुखो रहने का आधार पूछा है। मेरे विचार में शासन मुक्ति ही सुख का आधार है। शासन और समाज के अधिकारों की सीमाएँ फिर से घोषित हों। अब तक राजनीति से जुड़ें लोगों ने ये सीमाएँ मनमाने ढंग से लिखकर एक संविधान बना दिया और वही संविधान हम सबके लिये गुलामी का मजबूत आधार बन गया। अब एक नई संविधान सभा बने जिसका गठन नए सिरे से हो। यह सभा राज्य और समाज अर्थात् परिवार, स्थानीय, जिला , परदेश और संघ के अधिकारों की सीमाएँ तय कर। तब तक बाकी लोग तो व्यक्ति के चरित्र निर्माण में लगें ही हुए है। मैं उस असामायिक चरित्र निर्माण में लगकर अपना समय नुकसान नहीं करना चाहता।

(2) श्री उमापति पाण्डे, 249 पावर हाऊस रोड, मऊ, उत्तर प्रदेश।

ज्ञान तत्व अंक 116 में आपने निवेदन किया है कि "धर्म को धर्म हो रहने दें, संगठन का स्वरूप न दें। "मैं आपसे सहमत नहीं। भारत में इसाई, मुसलमान, बौद्ध, जैन, सिख में सभी हिन्दुओं से ही टुटकर बने है। किन्तु विभाजन की त्रासदी झेलने के बाद भी आज भारत का शेष हिन्दू लगातार अन्य संगठित धर्मावलम्बियों से लगातार दबता जा रहा है। विशेष रूप से मुसलमानां और ईसाइयों ने तो अपनी सभी सीमाएँ पार कर दी हैं। ऐसे संकट काल में हिन्दूओं को भी संगठित होना ही चाहिए जिसके आप विरूद्ध है। कृपया अपनी बात को और स्पष्ट करें कि हिन्दू संगठित न हो तो अपनी सुरक्षा कैसे कर पाएगा?

उत्तरः– एक निःशस्त्र और एक सशस्त्र के बीच टकराव की नौबत आई। निःशस्त्र लोगा को युद्ध के नियम बनाकर स्वंय को भी सशस्त्र करने की कोशिश करें यह हमारी मूर्खता होगी। यदि हम निःशस्त्र युद्ध के नियम बना दें और दुसर पक्ष के भी शस्त्र रखवा

दें तो अधिक सुविधाजनक होगा। इसाई और मुसलमान संगठित है। वे संगठन का लाभ भी उठा रहे हैं। आपकी सलाह हिन्दूओं को संगठित करने की हैं मेरी सलाह इसाइयों और मुसलमानों का भी संगठन स्वरूप समाप्त करने की है। हिन्दू बहुतम में है । हिन्दू यदि संविधान में ऐसा संसोधन करा दे कि धर्म संगठन का स्वरूप न ले सके तो इसमें क्या कठिनाई है? भारत के अनेक हिन्दु समान नागरिकता के पक्ष में हैं और हिन्दू राष्ट्र के विरूद्ध । हिन्दूओं मे मतैक्य बन नहीं पा रहा इस मर्तक्य में बाधक कौन है यह विचारणीय ह। मेरा मत है कि हिन्दु राष्ट्र वाले मतैक्य में बाधक है यदि हिन्दू राष्ट्र की जिद छोड़कर समान नागरिक संहिता पर मतैक्य कर लिया जावें तो संगठित मुसलमान ओर ईसाई स्वयं असंगठित हो जावेंगे। इसलिये मैने निवेदन किया है कि धर्म को संगठन का स्वरूप देना ठीक नहीं है।

आज हिन्दू सुरक्षा की चिन्ता कर रहे हैं भारत मं गरीबी रेखा के नीच के लोगों की गणना करें तो उनमें अधिकांश संख्या हिन्दुओं की ही हैं। मुसलमान या इसाई इक्का दुक्का ही मिलेंगे। क्या यह न्यायसंगत नहीं होगा कि हम गरीबी रेखा के नीचे वालों की गरीबी की भी चिंता करें? आज न्युनतम श्रम मूल्य से भी नीचे श्रम मूल्य में भी बेराजगार रहने वाले अधिकांश हिन्दू ही है। क्या उचित नहीं होगा कि हम बेरोजगारी समाप्त करने को उच्च प्राथमिकता दें? मुझे तो लगता है कि गरीबी रेखा और बेरोजगारी मुक्ति हिन्दू सुरक्षा में साधक होगी बाधक नहीं। आर्थिक असमानता और श्रम शोषण पर कोइे न कोई लगान न लगाकर हम अप्रत्यक्ष रूप से इस्लाम और इसाइयत की सहायता करते हैं। मैं चाहता हूॅ कि हिन्दू संगठन के प्रत्यक्ष प्रयासों की अपेक्षा अप्रत्यक्ष प्रयास अधिक सफल होंगे अर्थात समान नागरिक संहिता, गरीबी रेखा की समाप्ति, न्यूनतम श्रम मूल्य से नीचे की बेरोजगारी समाप्ति को सर्वोच्च प्राथमिकता दी जावें।

(3) श्री कृष्ण कुमार खन्ना, मेरठ।

ज्ञान तत्व मिलता रहता है। कुछ सुलझे कुछ उलझे विचारों से मंथन की प्रक्रिया प्रशंसनीय है। कानूनों में सुधार आवश्यक हैं यह मांग उचित है किन्तु कानूनों में क्या सुधार हो इस सुझाव के साथ ही मांग का औचित्य है वर्ना सुझाव के बिना मांग तो कोई भी कर सकता है।

आप नई संवैधानिक व्यवस्था में निम्न मुद्दों पर व्यापक प्रकाश डालें:—

(1) शिक्षा, (2) चुनाव, (3) न्याय, (4) आर्थिक संरचना, (5) वर्तमान स्वीकृत गरीबी रेखा से निकालने का उपाय।

उत्तरः—आप जानते हैं कि बिना सुझाव के मांग प्रस्तुत करने का कभी भी मेरा स्वभाव नहीं रहा। आपने जिन मुद्दों पर जानना चाहा है उन सब पर अलग अलग मेरी सोच बनी है जिसका विस्तृत विवेचन मैने अपनी पुस्तक भावी भारत का संविधान (मूल्य पंद्रह रूपये) में किया है। संक्षिप्त जानकारी यहॉ दे रहा हूॅ।

पूरे देश में एक सरकार होगीं। उसकी लोक सभा और परिवार सभा नाम से दो सभाएॅ होंगीं। सरकार की न्यायपालिका, विधायिका और कार्यपालिका होगी जिसका वर्तमान ढांचा अभी भी है। सरकार के पास पांच विभाग होंगे, (क) आंतरिक सुरक्षा, (ख) वाह्य सुरक्षा, (ग) वित्त, (घ) विदेश, (च) न्याय। इन पांचां के ठीक ठीक संचालन के लिये सरकार प्रदेश जिले तथा नीचे आवश्यकता अनुसार अधिकारी नियुक्त करके उन्हें अधिकार देगी।

पूरे देश में एक भारतीय समाज होगा। इसकी पहली इकाई परिवार, दूसरी क्षेत्र (गावं शहर) तीसरी जिला चौथी प्रदेश और पांचवी राष्ट्र होगी। सरकार के पांच विभाग छोड़कर अन्य सभी विभाग परिवार के लिय उक्त इकाई को स्वायत्त अधिकार होंगे।

नीचे की इकाई ऊपर की इकाई के अधिकार ले या दे सकेगी। नीचे की इकाइयॉ ऊपर वाली इकाइयॉ को नियंत्रित भी करेंगी और मार्ग दर्शन भी।

शिक्षा व्यवस्था पूरी तरह समाज का विषय होगा, सरकार का नहीं। शिक्षा में सरकार का न कोई हस्तक्षेप होगा न ही सकरार कोई खर्च करेगी। शिक्षा उसी तरह एक स्वतंत्र विभाग रहेगी जैसे वर्तमान मे न्यायालय। शिक्षा की सम्पूर्ण नीति और खर्च की व्यवस्था, क्षेत्र, जिला, प्रदेश, और राष्ट्र करेंगें। वे कैसी व्यवस्था करेंगे यह उनकी स्वतंत्रता होगी। इस संबंध में अभी से किसी प्रकार की कोई नीति नही बन सकती कयोकि नीति बनाने की स्वतंत्रता सामाजिक इकाइयों की है।

(2) संसद की चुनाव प्रणाली लगभग वही होगी जैसी अभी है। किन्तु समाज की चुनाव प्रणाली बिल्कुल विपरीत होगी अर्थात परिवार क्षेत्र सभा(गांव शहर) क्षेत्र, जिला, प्रदेश, सभा और प्रदेश राष्ट्रसभा का चुनाव करेंगे। सरकार के अधिकार दायित्व तथा हस्तक्षेप की अपेक्षा समाज के दायित्व, अधिकार तथा हस्तक्षेप कई गुना अधिक होंगे। इसलिये सरकारी चुनावो का महत्व अपने आप ही बहुत कम हो जायगा।

(3)न्याय व्यवस्था उतनी ही स्वतंत्र होगी जितनी अभी संविधान में है। विभागों के कम होने और कानूनों के कम हाने से न्यायालयों में मुकद्मे घटकर करीब एक प्रतिशत ही रह जावेंगे। अन्य सभी मुकद्में या तो होंगे ही नही या समाज में निपट जावेंगे। समाज व्यव्स्था भी चाहे तो अपनी पुलिस और न्यायालय दोनों पक्षों की सहमति से दण्ड या न्याय दे सकते हैं। एक भी असहमत पक्ष 'उक्त पुलिस या न्यायालय में जाने से इन्कार कर सकता है या फैसला से भी इन्कार कर सकता है। सरकारी पुलिस और न्यायालय के आदेश बाध्यकारी होंगे।

सर्वोच्च न्यायालय विशेष परिस्थिति में विशेष जिले के लिय अल्पकाल के लिये गुप्तचर न्यायाल की भी व्यवस्था कर सकता है। अनियंत्रित अव्यवस्था नियंत्रण को पारदर्शी न्याय कार्यपालिका का कोई दखल नहीं होगा।

(4) आर्थिक संरचना आर्थिक असामनता तथा गरीबी रेखा को समाप्त करने के लिये नई अर्थनीति लागू की जायगी। सभी सरकारी उधोगों का समाजीकरण कर दिया जायगा। सरकार किसी उधोग में न कोई हस्तक्षेप करेगी न ही उस पर खर्च करेगी न ही उससे कुछ लेगीं समाज या तो उधोग चलायेगा या निजीकरण करेगा या निगम बना देगा। यह समाज की विभिन्न इकाइयों की स्वतंत्रता रहगी। सरकार सिर्फ एक कर लगा सकेगी जो प्रत्येक परिवार की सम्पूर्ण चल अचल सम्पत्ति का दो प्रतिशत प्रतिवर्ष होगा। इस टक्स से सरकार का खर्च चल जायगा। अन्य सभी प्रकार के कर समाप्त हो जावेंगें।

कृत्रिम ऊर्जा की इतनी अधिक मूल्य वृद्धि कर दी जायेगी कि प्रत्येक व्यक्ति को चार सौ रूपया प्रति व्यक्ति प्रतिमाह का जीवन भत्ता दिया जा सके। विशेष स्थिति में यह भत्ता गरीबी रेखा के नीचे वालों तक सीमित किया जा सकता है। इस प्रयास से गरीबी रेखा पूरी तरह एक ही दिन में समाप्त हो जायगी, श्रम का मूल्य और मांग बहुत बढ़ जायगी, बेरोजगारी समाप्त हो जायेगी, ग्रामीण अर्थ व्यवस्था मजबूत हो जायगी, विदेश से डीजल, पेट्रोल आयात की आवश्यकता नही रहेगी, आर्थिक असमानता कम हो जायेगी, तथा शहरी आबादी गांवों की आर वापस जाने लग जायगी। अभी जो विदेशी कम्पनियों का संकट बना हुआ है वह भी सुलझ जायेगा क्योकि कृत्रिम ऊर्जा की मूल्य वृद्धि करके सभी कर समाप्त कर दें तथा जीवन भत्ता देने शुरू कर दें।

भ्रष्टाचार किसी भी देश में घुन के समान होता है। आप चाहे कितने भी अच्छ कानून बना लें किन्तु जब तक भ्रष्टाचार खत्म नही हाता तब तक कानूनों का लाभ नही हो सकता। किन्तु कानून ही भ्रष्टाचार पैदा भी करते हैं। अनावश्यक कानूनों ने

बहुत अधिक भ्रष्टाचार पैदा किया और भ्रष्टाचार ने आावश्यक कानूनों को भी प्रभावहीन बना दिया। यदि कानूनों को प्रभावशाली बनाना चाहते हैं तो भ्रष्टाचार को नियंत्रित करना अनिवार्य है और भ्रष्टाचार नियंत्रित करना है तो कम आवश्यक कान्नों को समाप्त करना आवश्यक है। किसी भ्रष्ट व्यवस्था में सरकारोकरण तो जहर के समान विषैला प्रभाव डालता है। यद्यपि सरकारीकरण का उचित समाधान तो समाजीकरण ही है किन्तु यदि अभी समाजीकरण करना ठीक न हो तो निजीकरण तो किया ही जा सकता है। आपने सुधरे हुए कानूनों की चर्चा की है। मैं तो कानूनों का कम से कम करना ही सुधार का पहला चरण मानता हूँ जिससे भ्रष्टाचार घटेगा और सुधरे हुए कानून प्रभावशाली होंगे।

(5) अशोक भाई, अगरा।

आपके संबंध में बहुत लोगों से चर्चा हाती रहती है।आपके विचारो का कोई विरोध नहीं हेता किन्तु आपके व्यक्तित्व संबंधी तीन प्रश्न प्रायः उठते रहते है–

(1) आप विश्वसनीय नहीं हैं।

(2) आप में स्थायित्व नही है।

(3) आप लक्ष्य की अपेक्षा मार्ग पर अधिक विचार मंथन करते हैं। स्वशासन हमारा लक्ष्य है और हिसा या अहिंसा मार्ग। हिंसा या अहिंसा पर आप आवश्यकता से अधिक चर्चा करते हैं।

उत्तरः–मेरे विषय में कई तरह की चर्चाऐं चलती रहती है। इनमें कुछ बातें सत्य होती हैं और कुछ असत्य। ऐसी बातें हमें मालूम नहीं होने से हम उसका सत्य स्पष्ट नहीं कर पाते। आपने बहुत अच्छा किया कि ऐसी चर्चाओं से मुझे अवगत कराया।

विश्वसनीयता के विषय में किसी भी प्रकार की शंका निर्मूल है। मेरा सबसे पहला सबंध परिवार से हैं परिवार में अब भी मेरे भाई भी साथ में हैं तथा पूरा परिवार एकजुट है जो सब मुझे अपना मुखिया मानते हैं। परिवार के सभी चौवालोस सदस्य प्रत्येक चार माह में एक साथ बैठतें हैं और विभिन्न पारिवारिक विषयों पर खुली चर्चा रखते हैं। मेरे रिश्तेदारों की संख्या भी बड़ी है जिन सबमें मेरी वश्विसनीयता में कोई संदेह नहीं हैं।

मेरा दूसरा संबंध अपने शहर तथा आस–पास से निवासियों से है। शहर के अतिरिक्त आस–पास भी मेरी विश्वसनीयता का पता किया जा सकता है। मेरे विषय म यह विख्यात है कि मैं समाज में झूठ नहीं बोलता तथा पंचायत में किसी भी स्थिति में पक्षपात नही करता।

तीसरा विश्वनीयता मित्रों में है। मेरे जो भी मित्र बनें उन सबसे मेरे मित्रवत् सम्बन्ध पचास पचास वर्षो से हैं जो आज भी यथावत हैं। मैं जल्दी किसी को मित्र या सहयोगी नहीं बनाता। यदि मेरे मित्र से मर विचारों में भिन्नता भी आ जाये तो मेरा मेत्री संबंध पर उसका कोई प्रभाव नहीं होता। रोशनलाल जी तीस वर्षो से मेरे मित्र हैं। मेरे उनके विचार बिल्कुल भिन्न भिन्न दिशाओं में है किन्तु आपस में मेत्री संबंध विश्वसनीय बने हुए हैं। आप रामानुजगंज शहर से पता कर सकते है कि मेरे मित्रों के बीच मेरी कैसी विश्वसनीयता हैं।

चौथी विश्वसनीयता संगठन में है। बिल्कुल ही बचपन में आर्य समाज के विचारों से प्रभावित हुआ। मैं जीवन भर आर्य समाज से जुड़ा रहा। राजनैतिक विचारधरा मेरी समाजवादी रही। मध्यप्रदेश की राजनीति का ध्रुवीकरण कांग्रेस और जनसंघ के बीच उसी समय से रहा। मैं गैर कांग्रेसवाद का पक्षधर था। मैं पैंसठ में जनसंघ का सदस्य बना और उसी समय रामानुजगंज

नगरपालिका का चेयरमैन बना। मेरी उम्र पचीस वर्ष थी जो नगरपालिका कानून के अनुसार न्यूनतम थी। जनसंघ और भाजपा में रहते हुए भी विचारधारा में मैं समाजवादी रहा। सन् चौरासी में मैने राजनीति छोड़ दी और अब तक उससे दूर हूँ। इसके बाद भी आज तक भाजपा के लोगों में मेरी विश्वसनीयता का अभाव नही है।

सन् नब्बे से मेरा सम्बन्ध बंग जी से है। मुझे बंग जी मे कुछ विलक्षण गुण दिखे। हमारा एक दूसरे में विश्वास बढ़ता गया। मैं सर्वोदय मित्र बना किन्तु सर्वोदय का सदस्य नहीं बना क्योंकि सर्वोदय के वामपंथी धड़े को मुझ पर सदा अविश्वास रहा। जब तक मैं सर्वोदय मित्र नहीं बना था तब तक मुझमें गुण ही गुण दिखते थे। मित्र बनते ही मुझ में सारे अवगुण दिखने लगें। वामपंथी लोगों को मैं खटक रहा था। तीन चार माह में ही मैं अविश्वसनीय घोषित हो गया। किन्तु सर्वोदय के संबंध में मेरी जो धारणा पहले थी वही अब भी है कि विचारधारा के रूप में सर्वोदय ही लोक स्वराज्य की दिशा में सर्वाधिक स्पष्ट संगठन हैं।

पांचवी विश्वसनीयता मेरी धर्म निरपेक्षता के प्रति है। बचपन से ही मैं जाति और धर्म के मामले में कट्टरता का विरोधी रहा। बचपन से लेकर आज तक मैने हिन्दुंओं का धर्मनिरपेक्ष माना तथा संघ और इस्लाम को धर्मान्ध। संघ और इस्लाम से मरे वैचारिक संबंध बहुत कटु रह। किन्तु दोनो ने सामाजिक संबंधां के मामलें में मुझ पर सदा विश्वास किया। उस क्षेत्र में जाकर देखा जा सकता है कि वहॉ के मुसलमानों की कट्टरता का मैं संघ परिवार से अधिक विरोधी रहा हूँ किन्तु वहॉ के मुसलमानों का पूरा पूरा वोट चुनाव मे मुझे मिला, क्योंकि मैं उनका विश्वसनीय विरोधी था और दूसरे अविश्वसनीय मित्र। विश्वसनीयता के मामले म दावा कर सकता हूँ कि मेरे किसी विरोधाी ने यह दुष्प्रचार किया है जा पूरी तरह असत्य है।

आपने मेरे स्थायित्व की चर्चा की है। इस संबंध में मैं पूरी तरह स्पष्ट हूँ कि मेरे विचारों में बिल्कुल भी स्थायित्व नहीं है। जब भी मुझे महसूस होता है कि मेरे निष्कर्ष गलत हं मैं अपने निष्कर्षो को बदलने में देर नहीं करता। मैंने दस वर्ष पूर्व नक्सलवाद को व्यवस्था परिवर्तन का एक हिंसक स्वरूप माना था। इस वर्ष मैं इस नतीजे पर पहुॅचा कि नक्सलवाद सिर्फ सत्ता संघर्ष है। व्यवस्था परिवर्तन से इसका कोई लेना देना नहीं है। मैने अपने विचार बदल लिये। बचपन से मैं मानता रहा ह् कि संघ इस्लाम के चरित्र का ठीक ठीक आकलन करता है। बाद में मुझे महसूस हुआ कि संघ इस्लाम की साम्प्रदायिकता का समाधान नहीं कर सकता कयोकि समस्या का समाघान अकल से होता है डण्डे से नहीं। मैंने अपना स्वतंत्र मार्ग चुन लिया और साम्प्रदायिकता के मामले में संघ पर भरोसा करना बन्द कर दिया। पिछले कुछ वर्षो मे मुझे महसूस होता रहा कि भारत में सर्वोदय लोकर स्वराज्य की दिशा में आगे बढ़ सकता है। सम्पर्क में आने पर पता चला कि सर्वोदय में वामपंथाी अल्पमत में होते हुए भी पूरी तरह हावी हैं। ये लोग सर्वोदय को कभी अहिंसा और लोक स्वराज्य की दिश में आगे नहीं आने देंगे। मैंने दूरी बनाकर काम शुरू करना ठीक समझाा। पिछले एक वर्ष से मैं व्यवस्था परिवर्तन अभियाान का संयोजक रहा। मुझे लगा कि मेरी स्पष्टवादिता अभियान के लिये भारी पड़ सकती है । मैने अभियान का संयोजक पद छोड़ दिया। मै एक विचारक हूँ अनुगामी नहीं। विचारक और अनुगामी की स्थिति भिन्न–भिन्न होती है। विचारक में यदि स्थायित्व हो गया हो तो वचह अनुगामी सहित असफल हो जायगा। अनुगामी में स्थायित्व के हिसाब से मुझे जैसा होना चाहिये वैसा हो मैं हूँ।

आपने लक्ष्य और मार्ग की चर्चा की है। लोक स्वराज्य हमारा लक्ष्य है। हिंसा या अहिंसा मार्ग। लक्ष्य और माग अलग–अलग होते हैं ऐसा ही मैं भी मानता हूँ। मैने जीवन भर अहिंसक मार्ग की ही साधना की है और कभी असफल नहीं हुआ। मुझे अहिंसा पर पूरा विश्वास हो गया है। मैं तो इस निष्कर्ष तक पहुॅच चुका हूँ कि लोकतंत्र में हिसा कभी सफल हो ही नहीं

सकतीं हिंसा या अहिंसा की बहस तो तानाशाही में ही संभव हैं। फिर भी यदि भारत में कोई हिंसा के पक्ष में कोई बहस शुरू करता है तो मैं अपने तर्क अहिंसा के पक्ष मं पस्तुत करना आवश्यक समझता हूॅ। आज तक लोकतांत्रिक सत्ता का लोकतांत्रिक परिवर्तन हिंसा से नहीं हुआ न ही भविष्य में होगा । जहॉ तानाशाही रही वहॉ हिंसा से लोकतंत्र आ सकता है या लोकतंत्र को हिंसा से तानाशाही में बदला जा सकता है। किन्तु लोकतंत्र मेंं ही बनाये रखने के बीच हिंसा का कोई स्थान नहीं है।

मैने हिंसा की समर्थक कई बैठकों में भाग लिया। वे सबके सब घुमा फिराकर तानाशाही की दिशा में जाते दिखते है। पहले यह तो तय हो कि लक्ष्य तानाशाही है या लोकस्वराज्य? यदि व्यवस्था परिवर्तन की दिशा लोक स्वराज्य होती तब तो मैं हिंसा समर्थक तर्कों पर विचार भी कर सकता था किन्तु जो सत्ता परिवर्तन को ही व्यवस्था परिवर्तन मानते हैं या जिनकी साच लोकस्वराज्य की ओर झुकी हुई नहीं है वे चाहे हिंसा का समर्थन करें या अहिंसा का वे मेरे मित्र नहीं हो सकतें।

नक्सलवादियों को छोड़कर मूझे एक भी हिंसा का ऐसा समर्थक नहीं दिखा जो हिंसा का प्रयोग भी करे। आचारण में अहिंसा और प्रचार में हिंसा से संदेह होता है कि उनका उद्देश्य समाज में हिंसक वातावरण बनाकर अव्यवस्था फैलाना मात्र है। कई बार तो मुझे यहॉ तक जानकारी होती है कि अव्यवस्था के पक्षधर इनमें से अनेक लोग या तो अमेरिका आदि देशा से धन लेते हैं या चीन आदि देशों से धन लेकर उनकी दलाली करत है। मैं इस विवाद में नही पड़ना चाहता। किन्तु मैं यह भी सहन नहीं कर सकता कि विपरीत लक्ष्य के लोग हिंसा के समर्थन के नाम पर मजबूत हों।

फिर भी मैं आपको आश्वासन देता हूॅ कि हिंसा मेरा लक्ष्य नहीं है मार्ग है। यदि किसी गुट ने हिंसक तरीके से लोक स्वराज्य की दिशा में व्यवस्था परिवर्तन के प्रयास किये तो उनका मैं विरोध ता नहीं करूॅगा। मं उनका सहयोग तो नही कर सकता क्योंकि मुझे हिंसा की सफलता पर रत्ती भर भी विश्वास नहीं है किन्तु मैं उनके समर्थन पर विचार कर सकता हूं। दूसरी ओर यदि अहिंसक तरीके से भी वर्तमान व्यवस्था को मजबूत करने का प्रयास होता है तो मै यथा शक्ति ऐसे प्रयत्नों का विरोध करूॅगाा, हिंसा या अहिंसा उस पथ मे बाधक नही होगी ।

मैने एक ऐसी व्यवस्था का सपना देखा है जिसमें अधिकतम सत्ता स्थानीय इकाइयों के पास होगी, ग्यारह अपराध न्यूनतम होंगे, साम्पदायिकता शून्य होगी, गरीबी रेखा के नीचे एक भी व्यक्ति नहीं होगा। इस कार्य के लिये एक ऐसे मंच की आवयकता है जिसमें सभी वर्गो के सहमत लोग एक साथ बैठ सकें। इसमें धर्म जाति, गरीब, अमीर, भाषा, लिंग आदि के आधार पर कोई भेद नही होगा। इस संबंध में एन.ए.पी.एम. पर बंग जी से विस्तृत चर्चा हुई थी। एन.ए.पी.एम. में ऐसा कोई भेद नही है किन्तु एन.ए.पी. एम. जन आंदोलनां का मंच है अर्थत् आंदोलन की दिशा स्पष्ट नहीं है कि उसका उद्देश्य क्या है? जन आंदोलन किसी मंच का उद्देश्य नहीं हो सकता। यदि आंदोलन के लिय कोई आंदोलन होता है तो मेरे विचार मे उसके पीछे या तो कोई विदेशी धन है या कोई सत्ता संघर्ष। मैं ऐसी बातों पर विश्वास नहीं करता। मैने बंग जी को सलाह दी थी कि मंच का नाम एन.ए.पी.एम. लोक स्वराज्य आंदोलनों का राष्ट्रीय समन्वयक रखकर एक नया मंच बने। इस संबंध में चर्चा चल ही रही थी कि इस मंच से संघ समथकों को बाहर रखने की बात आ गई जिसे मैं स्वीकार नहीं कर सका। यह मंच स्थगित हो गया और मेरे अनेक साथियों ने ऐसा मंच बनाने के स्थान पर ऐसा संगठन बनाने की पहल की।

मैं आपको पुनः आश्वस्त करता हूॅ कि अपने साम्पूर्ण जीवन में आचरण में विश्वसनोयता मेंरी पूॅजो है, विचारों में मैं बहता हुआ नदी का जल हूॅ तालाब का स्थाई जल नहीं तथा आंदोलन में लक्ष्य के प्रति पूरी तरह स्पष्ट हूॅ। आप हमारी केन्द्रीय

सलाहकार समिति के महत्वपूर्ण सदस्य हैं तथा आपने कुछ गंभीर मित्रों की शंकाओं के बाद ही यह प्रश्न किया है। इसलिये मैने विस्तृत विवेचना उचित समझा।